शोध लेख : साहित्य की सिनेमाई पटकथा रूपांतरण की समस्याएँ

-साधना अग्निहोत्री
पी-एच.डी. (हिंदी), अलीगढ़ मुस्लिम यूनिवर्सिटी, अलीगढ़
https://sahityacinemasetu.com/shodh-lekh-sahitya-ki-cinemayi-patkatha-rupantaran-ki-samsayayein/

'साहित्य और सिनेमा का संबंध एक अच्छे अथवा बुरे पड़ोसी, मित्र या संबंधी की तरह एक दूसरे पर निर्भर है। यह कहना जायज होगा कि दोनों में प्रेम संबंध है ।"[1] – गुलज़ार

साहित्य और सिनेमा दोनों ही ऐसे माध्यम हैं, जो अपने परिवेश, समाज और विचारधारा को व्यक्त करने में सबसे अधिक सक्षम हैं। इन दोनों विधाओं ने ही समाज को हमेशा से ही नवीन विचारों और प्रवृत्तियों से जोड़ा है । साहित्य और सिनेमा का संबंध देखें तो सिनेमा अपने आरंभ से साहित्य का ऋणी रहा है। साहित्य की विभिन्न विधाओं को अपने में समाहित किए हुए एक साथ प्रस्तुत कर सिनेमा ने अपनी प्रभावशाली उपस्थिति और महत्व को दर्शाया है। साहित्य अपने उदार स्वरूप में कई सारी कलाओं को समाहित किए हुए है। जिसमें विचार है, बिम्ब है, गीत है, कविता है, कहानी है, उपन्यास है, चित्र है, नाटक है और समाज की गति को प्रकट करने की क्षमता है। साहित्य की इन सभी कलाओं के संबंध और संयोग से सिनेमा का निर्माण होता है।

चाहे हम सिनेमा के बड़े पर्दे की बात करें या फिर छोटे पर्दे की, सिनेमा अपने आरंभ से ही साहित्यिक रचनाओं से जुड़ा रहा है। यह और बात है कि किसी रचना को समाज में कितनी सफलता प्राप्त होती है। भारत की बात करें या विश्व की, साहित्य को सिनेमा में भरपूर स्थान मिला।

साहित्य और सिनेमा जीवन के नीरस तत्वों को कम करने का एक साधन भी है । साहित्य और सिनेमा हमें एक ओर जहाँ जीवन जीने की प्रेरणा देते हैं तो दूसरी ओर मनोरंजन के साथ संदेश भी देते हैं। दोनों ही ऐसे माध्यम हैं जो समाज को परिवर्तित करने की ज़बरदस्त ताकत रखते हैं, और अन्याय के खिलाफ कभी दबे स्वर में तो कभी बुलंद आवाज में सामने आते हैं। हमारे राष्ट्र और समाज के लिए जिस प्रकार साहित्य महत्वपूर्ण है उसी प्रकार सिनेमा भी अपनी अहम भूमिका निभाता है।

साहित्य की अपेक्षा सिनेमा एक नई विधा है, जो मानव द्वारा निर्मित खूबसूरत अविष्कारों में से एक है । जिसमें साहित्य की उन छूटी हुई लगभग सारी बातों को अपने में समेटे हुए हमारा मनोरंजन करता है । साथ ही यह बहुत सी जानकरी और शिक्षा भी देता है । इसी बात को और स्पष्टता से समझने के लिए आलोचक **डॉ. मैनेजेर पाण्डेय** के विचार को देखा जा सकता है । वे कहते हैं – "आजकल कला की कोई भी चर्चा फिल्म को छोड़कर पूरी नहीं हो सकती । वह आज के युग के सर्वाधिक प्रभावशाली और प्रतिनिधि कला है । फिल्म के निर्माण में कला और विज्ञान, साधना और व्यवसाय, वैयक्तिक रचनाशीलता और सामूहिक प्रयत्न का गहरा सामंजस्य होता है। फिल्म अनेक अर्थों में सामूहिक कला है । उसमें अभिनेता, निर्देशक, कथाकार, फोटोग्राफर, संगीतकार, गायक, वादक, नर्तक और तकनीकि विशेषज्ञों का सामूहिक

योगदान होता है । फिल्म निर्माण के पीछे पूँजी की जरूरत होती है और आगे बाजार की चिंता। फिल्म का दर्शक भी समूह होता है । इस तरह फिल्म आधुनिक युग की सामूहिक कला है।"[2]

जब साहित्य अपना रूप बदलकर या कहे तो अपने लिखित माध्यम से सिनेमा में परिवेश करता है तो उसे सिनेमा की तकनिकी प्रक्रिया से होकर गुजरना होता है। इसी तकनीकी प्रक्रिया को सिने-रूपांतरण/ माध्यम रूपांतरण कहा जाता है । माध्यम रूपांतरण की प्रक्रिया की जब हम बात करते हैं तो सामान्य शब्दों में कह सकते हैं कि किसी विधा को अन्य विधा के रूप का चोला पहनाकर नई विधा का निर्माण करना ही माध्यम रूपांतरण है । जिसमें एक कला या कृति के भाव-बोध को अन्य माध्यमों के द्वारा व्यक्त किया जाता है । यदि इसे संपादकीय कला या कौशल कहें तो गलत नहीं होगा, क्योंकि इसमें भी काट-छाँट, साज-सज्जा, विस्तार, जोड़ना-घटाना, प्रस्तुतीकरण आदि का ध्यान रखा जाता है । साहित्य से सिनेमा के रूपांतरण की प्रक्रिया और स्वरूप को समझते समय समाज की समकालीन वास्तविकता, दर्शकों की जिज्ञासा, राजनीतिक परिदृश्य, सांस्कृतिक समझ, लेखक और निर्देशक के विचारों में अंतर तथा, प्रस्तुतीकरण या तकनीकि विकास आदि को मुख्य बिंदुओं की ओर भी ध्यान देना जाना चाहिए। माध्यम रूपांतरण में किसी साहित्यिक रचना का हू-ब-हू फिल्मी रूपांतरण की बात करना संभव नहीं होता है तथा ऐसी बात करना भी बेईमानी है । इस संदर्भ को आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी जी के लेख 'कवि-कर्तव्य' द्वारा समझा जा सकता है । जिसमें वे लिखते हैं – "परंतु स्वतंत्र कविता करने की अपेक्षा दूसरे की कविता का अनुवाद अन्य भाषा में करना बड़ा कठिन काम है । एक शीशी में भरे हुए इत्र को जब दूसरी शीशी में डालने लगते है तब डालने में ही पहले कठिनाई उपस्थित होती है।"[3]

साहित्य और सिनेमा के आपसी संबंध में पटकथा का महत्त्वपूर्ण योगदान है । **पटकथा दो शब्दों, पट और कथा से मिलकर बना है। जिसमें पट का अर्थ है पर्दा और कथा का अर्थ कहानी से है अर्थात पटकथा का तात्पर्य है वह कथा जो पर्दे पर चलचित्रों के माध्यम से प्रसारित होती है।** जिसमें घटनाओं का ऐसा समूह होता है जिसके द्वारा चरित्र निर्माण व सर्जन, गीत-संगीत, संवाद आदि सभी को विकसित किया जाता है । कथा और पटकथा के विषय में कमलेश्वर का कहना है कि "कुछ अनुभव शब्द से परे होते हैं, कुछ दृश्यों से परे, इसीलिए फिल्म-लेखन में उन्हें शब्दों, दृश्यों और प्रवृत्तियों में बांधना पड़ता है । शब्दहीन दृश्य से भरा हुआ सन्नाटा कभी-कभी जो बात कह देता है, वो शब्दों से नहीं कही जा सकती । काव्य की बिम्ब-क्षमता, शब्दों की विचार क्षमता से नहीं कही जा सकती । काव्य की बिम्ब- क्षमता, शब्दों की विचार क्षमता और दृश्य की अनुभव-क्षमता के संयोग से एक सिने- दृश्य आकर पाता है । काव्य-क्षमता को कैमरा, दृश्य क्षमता को निर्देशक और विचार-क्षमता के साथ-साथ सम्पूर्ण अनुभव क्षमता की अभिव्यक्ति लेखक करता है इसीलिए कोई भी सार्थक फिल्म पहले लिखी जाती है-तब बनाई जाती है।"[4]

साहित्य में रचे गए चरित्र के प्रति व्यक्ति की अपनी एक अलग परिकल्पना हो सकती है। जैसे **'गोदान'** पढ़ने वाले लोगों के मन में **'होरी'** और **'धनिया'** का अपना ही एक चरित्र या कहें तो दृश्य हो सकता है। लेकिन सिनेमा में ऐसा कतई नहीं होता सिनेमा का अपना एक इमेज़ एक मकैनिज़्म होता है, जिसे दर्शकों पर थोपा जाता है। फिल्म देखना और साहित्य पढ़ना दो अलग-अलग विषय हैं। इन अलग-अलग विषयों को पटकथा लेखक फिल्मी रंग में ढ़ालता है। फिल्म, धारावाहिक, टेलीफिल्म, आदि इन सबके लिए पटकथा अनिवार्य प्रक्रिया है। जिस प्रकार साहित्य में विषय वस्तु को कथानक के माध्यम से बताया जाता है। ठीक उसी प्रकार फिल्म में पटकथा के जरिए यह कार्य किया जाता है । इसी बात की स्पष्टता तथा

कथा-पटकथा के अंतर को बताते हुए **मनु भंडारी** कहती हैं कि – "कहानी (साहित्य) और पटकथा में सबसे बड़ा और प्रमुख अंतर होता है प्रारूप का । कहानीकार को तो पूरी छूट होती है कि वह अपनी कहानी किसी भी शैली में लिखे । ..... उत्तम पुरुष में लिखे या अन्य पुरुष में.....डायरी फॉर्म में लिखे या पत्रों के रूप में, तरह-तरह के प्रयोग करने कि उसे पूरी छूट होती है पर पटकथा लेखक को तो सारी कहानी दृश्यों और संवादों में ढ़ालकर ही प्रस्तुत करनी होती है । कहानी में लेखक जितनी देर तक और जहाँ चाहे अपनी उपस्थिति दर्ज़ करा सकता है पर पटकथा में लेखक को तो बिल्कुल ही अनुपस्थित रहना होता है....जो कुछ भी कहना है मात्र पात्रों के संवादों के माध्यम से ।"[5]

वस्तुतः "पटकथा कुछ और नहीं, कैमरे से फिल्मकार द्वारा पर्दे पर दिखाए जाने के लिए लिखी हुई कथा है । गोया पहले आपके पास कोई कथा हो तभी आप पटकथा लिख सकते हैं ।"[6] **डॉ. रामदास नारायण तोड़े** पटकथा के अंगों को बताते हुए कहते हैं – "पटकथा के प्रमुख तीन अंग किए जा सकते हैं । कथा, पटकथा, संवाद । एक ओर दृश्यों के माध्यम से कथानक चलता रहता है । यह तीनों अंग एक-दूसरे से मिले हुए हैं । बिना संवाद के पटकथा तथा कहानी नहीं होती और बिना कहानी के पटकथा तथा संवाद नहीं होते । इसलिए पटकथाकार को इन तीनों अंगों का समतोल (Balance) रखना पड़ता है ।"[7]

यूं तो सिनेमा का निर्माण कठिन कार्य है, परन्तु साहित्यिक कृतियों पर फिल्म बनाना बहुत मुश्किल कार्य है । साहित्य में कथा का सृजन जीवन की अनुभूतियों में कल्पना का छींटा मारकर किया जाता है जबकि सिनेमा में कथा को कहा नहीं जाता बल्कि घटते हुए दिखाया जाता है । सिनेमा में संवाद कथा को गति प्रदान करते हुए चलता है, जिसे मनोभावों द्वारा अभिव्यक्त किया जाता है । यद्यपि साहित्य और सिनेमा दोनों में ही कथा होती है। अंतर सिर्फ इतना है कि एक में मूर्त रूप होता है तो दूसरे में अमूर्त।
किसी भी कामयाब फिल्म में पटकथा की भूमिका बहुत ही महत्वपूर्ण होती है और बात जब साहित्यिक कृती पर बनी फिल्म या उसकी पटकथा की हो रही हो तो पटकथा की भूमिका और भी महत्वपूर्ण हो जाती है । क्योंकि कहानी, कविता, नाटक या उपन्यास आदि पर लिखी गई पटकथा में बहुत-सी सावधानियों का ध्यान रखा जाता है । कभी-कभी ऐसा होता है कि जब उच्च कोटि की कथा पर पटकथा लिखी जाती है तो भी उस फिल्म को उतनी सफलता प्राप्त नहीं होती और कभी-कभी ठीक उसके विपरीत भी देखने को मिलता है जिसमें सामान्य-सी लगने वाली कहानी पर पटकथा लिखी जाती है और वह फिल्म उत्तम दर्ज़े की फिल्म बनकर सामने आती है।

फिल्मांकन में साहित्य के कथानक के साथ किया गया फेर-बदल कभी-कभी कथानक की पूरी आत्मा को ही बदल देता है जो कि उस साहित्यिक कृती के लिए बिल्कुल भी ठीक बात नहीं है । थोड़ा-बहुत फेर-बदल किया जा सकता है क्योंकि साहित्य और सिनेमा अपने बनावट के आधार पर अलग-अलग विधाएं हैं । इसी कारण साहित्यिक कृतियों का जब फिल्मांकन होता है तो उसका रूपांतरण कई जटिल समस्याओं से होकर गुजरता है । यह समस्याऐं किसी फिल्मी कहानी पर पटकथा लिखते समय उतनी नहीं होती जितनी साहित्यिक कृति पर फिल्म बनाने वाले निर्देशक को होती है। "किसी निर्देशक ने साहित्य पर आधारित कितनी भी फिल्मों का निर्माण क्यों न किया हो किंतु प्रत्येक नई साहित्यिक कृती फिल्मांतरण संबंधी नई समस्याएं लेकर उसके सामने प्रस्तुत होती हैं और वह किस प्रकार उनका समाधान करता है। यह पूर्णता उसकी योग्यता और परिश्रम पर निर्भर करता है । किन्तु इनके बावजूद भी वह सब समस्याओं का समाधान कर ही पाएगा यह आवश्यक नहीं है । यह अवश्य है कि एक अच्छा निर्देशक इस बात का

भरसक प्रयास करता है कि वह मूल कृति की आत्मा को अक्षुण्ण रखते हुए ही आवश्यक परिवर्तन करें और यदि संभव हो तो मूल रचना से भी सुंदर कृति का निर्माण कर सके । अथवा न्यूनतम भी उसकी रचना मूल कृति से कमतर न सिद्ध हो । फिर भी इस महान उद्देश्य को कम ही निर्देशक पूरा कर पाते हैं । स्वयं **सत्यजीत राय** भी **'शतरंज के खिलाड़ी'** पर आधारित अपनी फिल्म में असाधारण प्रतिभा, दीर्घ अनुभव और अथक परिश्रम के बावजूद इस उद्देश्य को प्राप्त करने में सफल न हो सके । जबकि इससे पूर्व वे साहित्यिक कृतियों पर आधारित अनेक उत्कृष्ट फिल्मों का निर्माण कर चुके थे । अर्थात फिल्मांतरण संबंधी विकट समस्याओं को देखते हुए यह कह पाना लगभग असंभव है कि कब किसी कृति का सफल फिल्मांतरण हो पाएगा और कब नहीं ।"[8]

पटकथा लेखन पाठकों के लिए ना होकर दर्शकों के लिए होता है, जिसमें पटकथा लेखक उन बिम्बों को शब्दों के माध्यम से गढ़ता है, जो दिखाए जाते हैं उन ध्वनियों को शब्द प्रदान करता है जोकि सुनी जाएंगी और इसी के साथ उसे दर्शकों की रुचि का ख्याल भी रखना होता है । इसलिए पटकथा लेखक को प्रत्येक स्थान पर नवीन समस्याओं का सामना करना पड़ता है । साथ साहित्य जगत में व्यवसायिकता का एक बहुत बड़ा पक्ष होता है जिसको देखकर ही किसी फिल्म का निर्माण किया जाता है इसी के आधार पर जब किसी कहानी की पटकथा लिखते हैं तो उसमें व्यवसायिकता का भी ध्यान रखना होता है।

उपन्यास या कहानी पर आधारित पटकथा लिखते समय साहित्यिक कृति के आधार को भी देखा जाता है, क्योंकि पाँच या छह पन्नों की कहानी पर जब ढाई घंटे की फिल्म बनाई जाती है तो उसमें बहुत कुछ जोड़ा जाता है और जब तीन सौ पन्नों के किसी उपन्यास पर फिल्म की पटकथा का निर्माण होता है तो उसमें बहुत कुछ छोड़ना भी पड़ता है ।

इसी कारण जब 'दो बैलों की कथा', 'तीसरी कसम', 'उसने कहा था', 'तलाश', 'शतरंज के खिलाड़ी' जैसी कहानियों पर पटकथाओं को लिखा गया तो बहुत-सी घटनाओं, पात्रों, गीतों एवं नृत्यों को भी जोड़ा गया । यही चीज हम 'गोदान', 'चित्रलेखा', 'गबन' जैसे उपन्यासों के फिल्मांतरण के संदर्भ में भी कह सकते हैं । ढाई से तीन घंटे की फिल्म में पूरा उपन्यास कभी भी रूपांतरित नहीं किया जा सकता है। "सत्यजीत रे द्वारा किए गए उपन्यास के फिल्मांकन इसके उत्तम उदाहरण है कि उपन्यासों को फिल्म में किस प्रकार रूपांतरित किया जाना चाहिए । रे की पहली फिल्म 'पथेर पांचाली' नाम के बहुत लंबे उपन्यास पर आधारित थी, लेकिन रे नें इस कृति की मूल संवेदना को अखंडित रखते हुए उसमें से केवल ऐसे प्रसंगों का चयन किया जिन से कथा का सूत्र तो बना रहे लेकिन फिल्म न तो लंबी हो, न कलात्मक दृष्टि से कमजोर । इन्हीं सब कारणों से 'पथेर पांचाली' इतनी संतुलित और अपने आप में संपूर्ण कृति बनी कि उसे विश्व की बेहतरीन फिल्मों में स्थान मिला ।"[9]

उपर्युक्त विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि कथा का पटकथा में रूपांतरण एक श्रमसाध्य कार्य है । साथ ही इसमें अनेक तकनीकी समस्याओं के साथ-साथ साहित्यिक कृति से न्याय का दवाब भी बना रहता है। कई बार यह प्रयास सफल होता है तो काई बार और सुधार के साथ प्रयास करने का मौका देता है। **सिनेमा के लिए पटकथा की भी वही स्थिति है, जो साहित्य के लिए कथा वस्तु की है।**

संदर्भ :

1. पांडेय, रतनकुमार.(सं.).(2014). मीडिया और साहित्य अंत:र्संबंध. दिल्ली. आनंद प्रकाशन. पृष्ठ सं.-66
2. जलक्षत्रि, नीरा.(2013). साहित्य और सिनेमा के अंतर्संबंध. दिल्ली.शिल्पायन. पृष्ठ सं.-1
3. कुमार, डॉ विपुल. (2014). साहित्य और सिनेमा अंत:र्संबंध और रूपांतरण. दिल्ली. मनीष पब्लिकेशंस. पृष्ठ सं.- 42
4. वहीं पृष्ठ सं.-106
5. भंडारी, मनु.(2013). कथा- पटकथा. दिल्ली. वाणी प्रकाशन. पृष्ठ सं.- 13
6. जोशी, मनोहर श्याम.(2002). पटकथा लेखन एक परिचय. नई दिल्ली. राजकमल प्रकाशन .पृष्ठ सं.- 21
7. तोड़े ,रामदास नारायण. (2016). हिंदी साहित्य फिल्मांकन. दिल्ली. लोकवाणी संस्थान. पृष्ठ सं.-187
8. दुबे,विवेक. (2009) .हिंदी साहित्य और सिनेमा. नई दिल्ली. संजय प्रकाशन. पृष्ठ संख्या -16
9. तोड़े ,रामदास नारायण. (2016). हिंदी साहित्य फिल्मांकन. दिल्ली. लोकवाणी संस्थान. पृष्ठ सं.-191